Chapter-4

–चतुर्थ –अध्याय–

क::– पंजाब के मध्यकालीन संत काव्यों में गुरु तत्व की अवधारणा एवं गुरु शिष्य परंपरा ।

ख::– पंजाब के मध्यकालीन संत कवियों का दार्शनिक विवेचन।

जब भारत में अधर्म बढ़ा ,लोग सत्य और धर्म को भूलगये आम लोगों ने धर्म के नाम पर अत्याचार किये गये ,धर्म के नाम पर अनेक प्रकार के पाखंड जन्में ठीक उसी समय पुनः धर्म की स्थापना हेतु लोगों के मन में परमात्मा के प्रति चेतना जगाने हेतु अज्ञान रुपी अंधकार में भटकते हुये लोगों का ज्ञान रुपी प्रकाश दिखनें हेतु स्वयं उस वर्ष व्यापक दिव्य शक्ति नें मनुष्य शरीर धारण किया ।

"जोत स्वरुप हर आप गुरु नानक कहाओ।।"

अर्थात जब वह निर्गुण ब्रह्म मनुष्य रुप में अवतरित हुआ हो तो उन्हें गुरु नानक कहा गया । गुरु नानक मानव को सच्चा रास्ता दिखाने ,लोगों का अंधविश्वास रुपी अंधकार से उबारनें एवं आत्मा के रोगों को दूर करनें के लिये इस धराधाम पर अवतरित हुये ।

सिख मत के अनुसार गुरु शब्द केवल उनके संप्रदाय में जन्में गुरु नानक देव से लेकर गुरु गोविन्द सिंह व गुरु ग्रंथ साहिब, जिसे उन्होनें सबद (शब्द ब्रह्मका रुप माना है) तक ही सीमित है ।

सामान्यतः गुरु शब्द की चर्चा वेदों से लेकर उपनिषदों ,पुराणों ,भक्ति साहित्य एवं मध्यकालीन संतों के साहित्य में सर्वत्र ही देखनें को मिलती है । जहां इन उपरोक्त स्थानों में गुरु को तत्वदर्शी, तत्ववेत्ता, परमात्मा से मिलानें का माध्यम आदि कहा गया है । एवं स्थान –भेद व भावावेश के आधार पर कहीं –कहीं उसे ईश्वर या ईश्वर से भी बड़ा कहा गया है । वहां सिख पंथ में तो गुरु को साक्षात् परमात्मा का ही अवतार माना गया है । इस प्रकार एक ब्रह्मनिष्ठ गुरु के प्रति ही भक्ति–भाव एवं सिख पंथ के गुरु के प्रति भक्ति–भाव में भेद है।

–गुरु की महत्ता–

युगों–युगों से जीम हुई अज्ञान की पर्तो को नष्ट करने के लिये जीव–आत्मा को सद्गुरु की आवश्यकता है । गुरु परमात्मा की रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ कृति है । तो जीव और परमात्मा का मध्य मार्ग है । गुरु वो सीढ़ी है जिसमें मनुष्य उस परमात्मा तक पहुंच सकता है । गुरु वो जहाज है जो जीवों को भवसागर से पार **उतारता है ,गुरु ही समस्त संसार की ज्योती है ।** गुरु–प्रसादि 'गुरु कृपा' मनुष्य के अहं भाव का विनाश कर उसके हृदय में परमात्मा के प्रति प्रेम'प्रीति' उत्पन्न करता है । बिना गुरु के सैकड़ों चंद्रमा व हजारों सूर्य भी अज्ञान रुपी अंधेरे को नष्ट नही कर सकते । उदाहरणार्थ –

एता चांद न होदियां गुरु बिन घोंर अंधियार ।।

झूठे गुरु::– **थोड़ी भी भक्ति भावना से रहने वाले लोग ये भली'भंति समझते है** कि उन्हें गुरु धारण करना परम् आवश्यक है । और पवे कोई न कोई गुरु अवश्य धारण करते है जबकि उन्हें गुरु की परख या कसोंटी नहीं मालूम होती । लोगों के इस अंधविश्वास व अज्ञानता नें हमारे समाज में गुरुडम को जन्म दिया । परंतु ऐसे गुरुओं से जीव का कल्याण असंभव है ।

"जाका गुरु है अंधरा, चेला खरा निरंत ।
अंधे ही अंधा ठेलिया ,दोनों कूप पड़न्त ।। कबीर

सद्गुरु क़ी दया ::– अखण्ड ज्ञान के भंडार सद्गुरु विनम्रता एवं दया का चोचला धारण किये हुये इस संसार में एक साधारण प्राणी की तरह विचरण करते है । परमात्मा की गति अथाह है । वह दिव्य शक्ति मनुष्य शरीर में एक **साधारण सेवक की भांति कार्य करते हुये मानवता को ईश्वर की ओर आर्कषित** करती है । इस प्रकार वह मानवता की रक्षक सद्गुरु के रुप में प्रकट परमात्मा का शक्ति स्वयं को परमात्मा का विनम्र सेवक बताते हुये जन–जन तक शांति एवं आनंद का संदेश पहुँचाती है ।

सद् गुरु स्वयं को परमात्मा का सेवक कहते हैं जबकि वे स्वयं परमात्मा

के सदृश्य होते हैं क्योंकि वो परमात्मा की दयावान, क्षमावान ,ज्ञानमय, तेजोमय, आदि समस्त उपाधियों से विभूषित व उस दिव्य– शक्ति से एकाकार होते हैं । वस्तुतः देखा जाये तो सद्गुरु की आत्मा व परमात्मा में कोई फर्क नही होता है

–::गुरु नानक की वाणी में सद्गुरु की महत्ता::–

भारतीय धर्म समाज में गुरु का स्थान बड़ा उच्च ,गौरवपूर्ण और समादृत है । वेदों उपनिषदों और श्री मत भगवत्गीता में गुरु की अपूर्व महत्ता मानी गयी है तंत्र साधकों ,योगियों ,नाथपंथियों सहजयानियों , वज्रयानियों तथा परवर्ती संतों नें गुरु की महिमा का अपार गुणगान किया है ।

गुरुनानक की दृष्टि में सद्गुरु का स्थान धार्मिक साधना में सर्वोपरि है । मूलमंत्र में 'गुरु प्रसादि' से यह बात सिद्ध हो जाती है । कुछ विद्वानों का यह मत है कि सद्गुरु की आवश्यकता पर गुरु नानक देव के पश्चात अन्य गुरुओं के द्वारा बल दिया गया ,पर यह धारणा निर्मूल और निराधार है । गुरु नाने के स्थान'स्थान पर गुरु की महत्ता स्वीकार करके उसकी महिमा का गुणगान किया है । उदाहरणार्थ –

"नदरी करहि जे आपणी ना नदरी सदगुरु पाइया।
एहु जिउ बहुते जनम भरंमिया ता सतिगुरु सबदु सुजाइया ।।
सतिगुरु जे वहुदाता को नही सभि सुजि अहु लोक सवाइया।
जिनि सचा सचु बुझाइया ।" 'आसा की बार"

गुरु नानक देव नें कर्म मार्ग ,योगमार्ग,ज्ञानमार्ग ,और भक्ति मार्ग सभी में गुरु का महत्व स्वीकार किया है । उन्हो नें अपनी वाणी में स्थान–स्थान पर सदगुरु और परमात्मा में अभिन्नता दिखलाई है । उदाहरणार्थ —

ऐसा हमारा सखा सहाई ।
गुरु हरि मिलिया भगति हड़ाई ।।'आसा,सबद'24
करि अपराध सरणिहम आइया ।
गुर हरि भेटे पुरबी कमाइया।।

किन्तु गुरु नानक देव नें असद् गुरु की तीव्र भर्त्सना की है । उनका कथन है कि 'ऐसे असद् गुरु झूठ बोलते है और हराम का खते हैं उनके स्वयं तो ऐसे आचरण है फिर भी दूसरों को उपदेश देते हैं । ऐसा गुरु स्वयं तो नष्ट होता ही है ,पर अपनें साथ ही दूसरों को भी नष्ट करता है । ऐसे असद् गुरु संसार में अगुआ 'गुरु के नाम से प्रसिद्ध होते हैं ।–

कुछ बोलि मुरुदारु खाइ ।

अवरी को समझावणि जाइ ।।

मुठा आपि मुहाए साथै ।

नानक ऐसा आगू जापै ।। 'मझ की वार'

ऐसे अंधे गुरु एवं उनके शिष्य को ठौर–ठिकाना नहीं प्राप्त हो सकता ।–

गुरु जिनका अंधुला चेलै नाहीं ठाउ ।

'सिरि रागु असटपदी'

अंधा गुरु जो दूसरों को राह दिखता है , सभी को नष्ट करता है ।

नानक अंधा होइकै दसै राहै समसु मुहाए साथै ।

असद्गुरु से बचनें के लिये इसी लिये – 'माझ की वार'

गुरु नानक देव नें सद्गुरु के लक्षण स्थान–स्थान पर बताये हैं ।

सो गुरु करउ जि साचु दृड़ावै ।

अकथु कथवै सबदि मिलावै ।। 'धनासरी,असटपदीर'

गुरु नानक देव के अनुसार गुरु और शिष्यों के सम्बंध समुद्र और नदियों के प्रेम के समान अन्योन्याश्रित है –

गुरु समंदु नदी सभ सिखी ।। ''माझ का वार''

गुरु नानक देव नें गुरु के 'सबद' की महत्ता पर बहुत अधिक बल दिया है 'सबद' का तात्पर्य 'वचन'उपदेश' अथवा 'शिक्षा 'आदि से है गुरु नानक देव का कथन है कि 'जो व्यक्ति गुरु के सबद में मरता है , वह ऐसा मरता है कि उसे फिर मरने की आवश्यकता नहीं पड़ती । बिना गुरु के 'सबद' के सारा जगत भटक कर इधर उधर धूमता फिरता है । बार–बार मरता है और जन्त लेता है ।

सबदि मरै सो मरि रहै फिरि मरै न दूजी बार ।
सबदै ही ते पाइये हरिनाम ले लगे पियारु ।।
बिनु सबदै जगु भूला फिरे मरि जनमै बारोबार ।।
सिरी रागु असपटीर'

सद्गुरु के बिना आत्म समर्पण भाव किये आध्यात्मिक प्रगति नहीं होती सद्गुरु में आत्मसमर्पण भाव मौखिक होना चाहिये बल्कि अपना तन और मन गुरु को बेच देना चाहिये और यदि आवश्यकता पड़े तो सिर के साथ मन भी सौप देना चाहिये।

मनु,तनु गुर, पहि, बेचिआ, मनु दीआ नालि।।
"सिरी रामु,सबद 17–"

क::– पंजाब के मध्यकालीन संत काव्यों में गुरु तत्व की अवधारणा एवं गुरु शिष्य परंपरा ।

जैसा कि द्वितीय अध्याय में ये बताया जा चुका है कि प्राचीन काल में गुरु का महत्वपूर्ण स्थान रहा है गुरु ही धर्म समाज और राजनीति का नियामक रहा है । राजनीतिक समस्याओं का निराकरण गुरु के ही द्वारा होता था । वेदों और उपनिषदों में गुरु की महत्ता वर्णित हुई है । वशिष्ठ, इन्द्र, शौनक ,नचिकेता, नारद , सत्यकाम , श्वेतकेतु, जनक आदि इसके उदाहरण हैं । 'मुण्डकोपनिषद ' 1– के दूसरे खण्ड में तथा श्री मद् भगवत गीता 2 के दूसरे तथा चौथे अध्याय में गुरु की महत्ता का वास्तविक निदर्शन हुआ है । तन्त्र साधना में गुरु को शिव के समान महत्व दिया गया है । कबीर आदि युग प्रणेता कवियो ने गुरु को ईश्वर के समकक्ष स्थान दिया है –3। इस प्रकार यदि हम मध्ययुगीन साहित्य की ओर दृष्टिपात करें तो हमें सभी पंथों में गुरु की महत्ता का उल्लेख मिलता है वैष्णवों –भक्तों नें तो शिक्षा गुरु और दीक्षा गुरु के दो

भेद बताये हैं । कुछ विद्वानों का मत है कि गुरु महिमा मध्ययुग के साधकों को अपनें पूर्ववर्ती तांत्रिकों और सहज भाव के साधकों से उत्तराधिकार के रुप में मिली थी । 4–

इसप्रकार यदि हम पंजाब के संत कवियों का अध्ययन करते हैं जो हमें यह ज्ञात होता है कि यह भी प्राचीन काल से चली आती हुई गुरु शिष्य परंपरा से अनुप्राणित है । यदि हम पंजाब के संत कवियो का अवलोकन करते हैं । तो हमें 'गुरु ग्रंथ साहिब' से ही गुरु की महत्ता तथा सर्वोपारिता परिलक्षित होती है । गुरु नानक देव जी नें गुरु की महत्ता पर प्रकाश डालते हुये कहा है कि "निरंकार परमात्मा की प्राप्ति गुरु के बिना संभव नहीं "। पंजाब के संतों ने कर्म मार्ग, योग मार्ग, ज्ञान मार्ग , और भक्ति मार्ग सभी में गुरु की महत्ता स्थापित की है । बिना गुरु के नतो सिद्धि प्राप्त हो सकती है , और न ज्ञान–भक्ति की प्राप्ति तो गुरु के बिना संभव नहीं हो सकती । संत कवियों ने तो यहा तक कहा है कि गुरु महिमा ऐसी है जिसे वेद भी नहीं जान सकते । सतगुरु परब्रह्म है अपरंपार है जिसके स्मरण से मन शीतल हो जाता है ।5– कही–कहीं तो परमात्मा के समस्त गुण सद्‌गुरु में आरोपित किये गये है । 6– गुरु रामदास जी के अनुसार सद्‌गुरु में निरंकार परमात्मा का वास होता है ।7– संत कवियों ने कही–कही परगुरु और परमात्मा के बीच इतनी अभिन्नता प्रदर्शित की है कि परमात्मा के स्थान पर 'गुरु ' शब्द का ही प्रयोग किया गया है । गुरु अमरदास जी के अनुसार जीवोंकी उत्पत्ति गुरु से होती है । 8– गुरु अर्जुन देव नें इस बात की पुष्टि की है कि गुरु परब्रह्म परमेश्वर है । उसी का हृदय में ध्यान करना चाहिये । 9– परंतु विभिन्न संतों के 'गुरु तत्व ' अवधारणा विषयक मतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु का पंच–भौतिक शरीर निरंकार की ही मूर्ति नहीं है , बल्कि उनकी आत्मा निरंकार का स्वरुप है । अतः गुरु में स्थित उनकी ज्योति ही परमात्मा का स्वरुप है । गुरु जीव और परमात्मा को मिलानें का कार्य करता है । अतः यह कहा जा सकता है कि जीव और

परमात्मा के बीच का मध्यस्थ सद्गुरु ही है । गुरु जब तक जीव का परमात्मा से मेल न कराये , तब तक वह भटकता ही रहेगा । स्थान–स्थान पर गुरु की मध्यस्थता की बात गुरु ग्रंथ साहब में की गई है । 10– लाखों कर्म करनें से भी बिना गुरु के परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती । सैकड़ों चन्द्रमाओं और सहस्र सूर्यों का प्रकाश भी बिना गुरु के अंधकारमय ही है । 'षट दर्शन, योगी ,सन्यासी आदि बिना गुरु के भ्रमित ही रहते है । 11– बिना गुरु के दुख ही भोगना पड़ता है । ब्रह्मा ,राजा बली, राजा हरिश्चन्द्र, हिरण्यकश्यप ,रावण, स्हस्रबाहु , मधुकैटम, महिसासुर , जरासंघ कालयवन, रक्तबीज, कालनेमि, दुर्योधन , जन्मेजय, कंस, केशी, चाडूर, इत्यादि उनके प्रत्यक्ष प्रमाण है । 12–

अतः जिन्होने सद्गुरु का साक्षात्कार नहीं किया हे । उनका जन्म निरर्थक है । बिना गुरु के अंधकार का प्राबल्य रहता है । जो सद्गुरु से मुंह फेरते है उनकी अत्यंत बुरी दशा होती है वह प्रतिदिन बांधे और मारे जाते है । बिना गुरु के लोग घोर अंधकार में अज्ञानी और अंधों के समान है । उनकी दशा विष्टा के कीट के समान है जिसतरह विष्टा का कीट उसी में उत्पन्न होता है , उसी में आजीवन रहते एकदिन उसी मे दम तोड़ देता है । 13– इसी भांति बिना गुरु के जीव विषयों में रहते है एक दिन उसी में फॅसकर मर जाते है । 14– अंधे गुरु भ्रम का निवारण कभी नहीं कर सकते है क्योंकि वह मूल परमात्मा को त्याग कर द्वैत भाव से ही लिप्त रहता है। वह विषय रुपी विष में इस तरह से मतवाला है कि अंत में उसी में अटककर उसी में समा जाता है । 15– गुरु नानक देव जी ने ऐसे सद्गुरु की तीव्र भर्त्सना की है । कि "ऐसे असद्गुरु झूठ बोलते है , हराम की कमाई खाते हैं ऐसे आचरण के बावजूद भी वे दूसरों को उपदेश देते नहीं चूकते है फलस्वरुप ये अपनें साथ शिष्य को भी नष्ट कर डालते है जो कि अगुआ के 'गुरु' के नाम से जाने जाते है । 16–अंधा गुरु अपनें शिष्य को क्या सही मार्ग दिखा सकता है ?17– गुरु अमरदास जी के कथनानुसार ऐसे लोग नित्य प्रति झूठ का ही सहारा लेते हैं। दूसरों के निन्दा

में ही निरंतर रत रहते है ऐसे लोग अपनें साथ–साथ अपनें कुदुम्ब का नाम भी डुबो देते है। गुरु अर्जुन देव के कथनानुसार सद्‌गुरु का सर्वप्रथम लक्षण है कि जिसनें सत्य पुरुष अथवा परमात्मा का साक्षात्कार किया हैं । वही सिक्ख का उद्धार कर सकता है । —

"सति पुरुखु जिनि जानिया, सति गुरु तिसका नाउ।
तिसकै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ।।"18

तथा—

"ब्रह्मु विंदे सो सतिगुरु कहिये हरि–हरि कथा सुनावै ।।"19

गुरु रामदास के मतानुसार सद्‌गुरु के लक्षण इस प्रकार हैं —20

1— जिसनें सत्य का साक्षात्कार किया हो।

2—जिसके मिलनें से तन,मन शीतलता का अनुभव करता हो । जो निन्दा और स्तुति दोनों के समान हो । जो ब्रह्म विचार में निमग्न रहता हो । जिसके नाम की प्राप्ति हो । नानक जी के अनुसार सद्‌गुरु अपनें शिष्यों की रक्षा अपनें प्राण की भांति करता है । 21— सद्‌गुरु अपनें शिष्य के लोक—परलोक दोनों ही सुधारता है । गुरु नानक जी के अनुसार "मै अपना गुरु उसे बनाता हूँ जो हृदय की सच्चाई को दृढ़ कराता है । शब्द ब्रह्म से मिलाप कराता है । परमात्मा के लोगों का कोई दूसरा व्यवसाय ही नहीं है । सत्य परमात्मा को सत्य ही प्यारा होता है । 22— गुरु रामदास जी के कथनानुसार 'विवेकी और समान दृष्टि रखनें वाला गुरु ही संकाओं का निवारण कर सकता है । ऐसे सद्‌गुरु की मै बलैया लेता हूँ । जिनकी प्राप्ति मात्र से ही परम् पद की प्राप्ति होती है । 23— सिख गुरुओं नें स्थान—स्थान पर इस बात का संकेत दिया है ,कि परमात्मा की अलौकिक कृपा से ही सद्‌गुरु की प्राप्ति होती है । गुरु प्राप्ति के लिये अपनें अहंभाव को त्यागना अति आवश्यक है । तभी सद्‌गुरु की प्राप्ति हो सकती है । गुरु शिष्य का एक अलौकिक संबंध है । इसी लिये सच्चा शिष्य संतान से भी ऊँचे स्थान की प्रियता को प्राप्त करता है । गुरु नानक देव इसकी

पुष्टि का प्रमाण देते हुये कहते है। कि 'गुरु शिष्य के ऊपर माता–पिता की भांति स्नेह करता है ' कहीं–कहीं गुरु को ही पिता–माता के अलावा सखा सहायक सर्वस्व गुरु को ही माना गया है इस बात की पुष्टि सद्‌गुरु को 'समुद्र' और शिष्य को 'नदिया' का विश्लेषण देकर की गई है । जिस प्रकार नदियां पृथक'पृथक दिखाई देती हैं , परंतु जब समुद्र में जाकर मिल जाती है। ,तो वह अपनें नाम और रुप को खोकर समुद्र रुप ही होजाती है । ठीक उसी प्रकार शिष्यों का पृथक–पृथक अस्तित्व है । परंतु सद्‌गुरु से मिलते ही अपनें पृथक नाम रुप को त्याग कर ,सद्‌गुरु सद्‌गुरु से मिल एक हो जाते हैं । 24– पूर्णावस्था में में सिक्ख और गुरु एक हो जाते हैं ।25– सद्‌गुरु के प्राप्त होनें पर वही साधक उससे लाभान्वित हो सकता है जो कि उसमें पूर्ण श्रद्धा ,विश्वास और भक्ति रखता हो सद्‌गुरु को परमात्मा का ही साक्षात् स्वरुप समझना चाहिये । परमात्मा की अखंड ज्योति ही सद्‌गुरु में प्रतिष्ठापित होती है । गुरु के प्रति हमें पूर्ण रुप से निष्कपट और सरल रहना चाहिये । गुरु से तिल मात्र भी दुराव नहीं करना चाहिये । जो गुरु अपनें को छिपाता है उसे कहीं भी ठौर–ठिकाना नहीं मिलता उसके लोक के साथ उसका परलोक भी नष्ट हो जाता है । जो अपनें को गुरु से छिपाते है उन्हें 'अत्यंत बुरे' पापी हत्यारे ,के नाम से अभिहित किया गया है । यहां 'गुरु सबद' का तात्पर्य गुरु उपदेश से है । गुरु की वाणी और गुरु में तिलमात्र का भी अंतर नहीं हैं । गुरु वाणी ही गुरु है । गुरु सबद में अमृत का निवास है । 26–बिना गुरु के 'सबद' के बार–बार मरना और जन्म लेना पड़ता है । 27– गुरु वाणी मन में बसानें से निरंतर परमात्मा की प्राप्ति होती है साधक की ज्योति परमात्मा की ज्योति से मिलकर एक हो जाती है । 28– सद्‌गुरु के चरणों में अनन्य भाव से अर्पित कर देना चाहिये । गुरु सेवा ही परमात्मा की सेवा कहलाती है। 29–

सद्‌गुरु की सेवा जो बहुत ही कठिन है । अपनें आप को मिटाकर भी यदि सेवा का शुभ अवसर प्राप्त हो जाये तो उसे करनें से नही चूकना

चाहिये ।30— गुरु रामदास के कथनानुसार जो सद्गुरु परमात्मा का अलौकिक प्रेम प्रदान करता है उसकी सेवा तन मन लगा कर करनी चाहिये उस पूर्ण सत्ता को नित्य पंखा करना चाहिये उसका पानी भरना चाहिये । 31— गुरु अर्जुन देव जी के अनुसार "गुरु के चरणों को धोकर पीना चाहिये । उनके चरणों की धूलि में स्नान करना चाहिये । उनका आटा नित्य पीसना चाहिये ।32— जिह्वा को गुरु के जप में अंतःकरण को गुरु की आराधना में, नेत्रों को गुरु दर्शन में एवं कानों को गुरु शब्द में तल्लीन रखना चाहिये ।33— गुरु में एक निष्ठता होनें पर ही उसकी आंतरिक सेवा हो सकती है । तभी श्वासोंश्वास से उनका स्मरण हो सकता है गुरु को अपना प्राण समझा जाए और तभी उसको अपनीं सर्वस्व राशि समझनें की बुद्धि सुलभ होती है । 34— सद्गुरु की प्राप्ति से ऋद्धियां—सिद्धियां तक चेरी हो जा सकती हैं । जो कि सांसारिक ऐश्वर्य की चरम सीमा है 35— इससे बढ़कर कोई सांसारिक विभूति नहीं । सद्गुरु की प्राप्ति की वास्तविक सिद्धि जन्म मरण के चक्र को काटना है । 36— गुरु के प्रसाद से ही अहंकार का सर्वथा नाश होता है । 37— उसकी कृपा से ही ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है । 38— गुरु कृपा एवं गुरु सेवा से प्राप्त होनें वाला असंख्य फल हैं जिनकी गणना करना दुर्लभ है । उसे तो कोई सद्गुरु ही जान सकता है ।

गुरु नानक के पूर्व रामानन्द और गोरख नाथ नें जिस धार्मिक एकता का उपदेश दिया था कबीर नें भी मूर्ति पूजा का विरोध किया । समाज सुधारक के साथ—साथ उनका प्रचार जाति—पांति की संकीर्णताओं से दूर हटकर समाज को एक सूत्र में बांधनें का प्रयास किया । इस प्रकार गुरु नानक के पूर्व जितनें भी धर्म सुधारक संबंधी आंदोलन हुये वे प्रायः सभी सांप्रदायिक थे और वाद—विवाद में रत थे इसी धार्मिक एकता से प्रभावित होकर गुरु नानक देव जी ने सिक्ख धर्म की स्थापना की । इस प्रकार मध्य युग के धर्म सुधारको में गुरु नानक देव का विशिष्ट स्थान रहा है । इस प्रकार सिख धर्म की परंपराओं

और उनकी विशेषताओं को दो भाग में विभाजित किया जा सकता है । 1'व्यवहारिक पक्ष, 2' सैद्धांतिक पक्ष ।

1–व्यहारिक पक्ष – गुरु नानक द्वारा संस्थापित सिक्ख धर्म की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होने सामाजिक कृतियों का पूरी तरह से खंण्डन ,एवं नारी समाज को गौरव एवं प्रतिष्ठा दी है । गुरु नानक देव नें ब्राह्मणों ,जैनों, बौद्धों, काजियों, योगियों, और मुल्लाओं के बाह्याडम्बरों का खण्डन एवं धर्म के वास्तविक स्वरुप की स्थापना की है । गुरु नानक देव जी के बाद गुरु गोविन्द सिंह नें भी इस परंपरा को उसी रुप में आगे बढ़ाया है । सिक्ख धर्म के विकास उन्मुख प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती गई । नानक जी नें परमात्मा को रुप और आकार की सीमा से परे माना । ऐसे इष्टदेव की उन्होने कल्पना की जो 'अकालमूर्ति अजूनी 'अजन्मा तथा सैभं'''स्वंभू'' निवृत्त मार्ग त्याग कर इन्होनें प्रवृत्ति मार्ग को अपनाया जनता की निराशा वादिता को दूर कर इन्होनें उसमें आशा ,विश्वास और पौरुष की भावना जागृत की । हिन्दू मुसलमान दोनों ही धर्मो के बीच समन्वय स्थापित करनें की कोशिश की । एक ओर जहां सच्चे मुसलमान बनने की विधि इन्होनें बताई 39– तो दूसरी ओर सच्चा ब्राह्मण होने की विधि सुनाई । 40– इन्होनें सभी धर्मो के प्रबल व्यवहारिक पक्ष को अत्यंत उदारता दृष्टि से देखा है ।

सैद्धांतिक पक्ष ::– गुरु नानक देव तथा अन्य गुरुओं नें परमात्मा का साक्षात्कार किया और प्रत्यक्ष अनुभूतियों को ही लोक–भाषा में अभिव्यक्त किया । नानक देव जी के उपदेश में भी वही अनुभूति झलकती दिखाई पड़ती है जो हिन्दुओं के 'प्रस्थानत्रयी ' अर्थात उपनिषद ,ब्रह्मसूत्र तथा श्री मद् भगवत्गीता ,मुसलमानों के कुरान ओर ईसाइयों के बाइबिल में मिलती है । इन्हों नें उस चरम् सत्य को जनता के सम्मुख रखा । परमात्मा के अव्यक्त ,निर्गुण स्वरुप का सिद्धांत सर्व ग्राह्य साबित करवाया अवतारवाद का खंण्डन कर रकेश्वाद की इन्होनें प्रस्थापना की । जीव, मनुष्य और आत्मा को भी संबंध में इनके

अपनें सिद्धांत हैं । नानक जी ने सृष्टि को सत्य माना है एवं माया को परमात्मा के आधीन माना है । परमात्मा प्रप्ति को ही इन्होनें जीवन का लक्ष्य बताया है । उसकी प्रप्ति में कर्ममार्ग ,ज्ञानमार्ग तथा भक्तिमार्ग की सार्थकता बतलाई है यदि हमें गुरुओं के जीवन दर्शन और उनके द्वारा रचित साहितयिक कृतियों का अनुशीलन करना है तो हमें उनके जीवन परिचय को जान लेना आवश्यक हो जाता है । यहां पर स्पष्ट कर देना आवश्यक हो जाता है कि पंजाब में संत साहित्य को गुरु परंपरा और चिंतन को अभिव्यक्ति देने में सिक्ख गुरुओं के अलावा भक्तगणों ,भट्ट समूहदायों और फूटकल वाणिकारों का महत्वपूर्ण स्थान है । जिसे निम्न कोटि में विभाजित किया जा सकता है ।

क::सिक्ख गुरु, ख:: भक्त गण, ग:: भट्ट समुदाय, घ:: फुटल वाणीकार –

क::–सिक्ख गुरु ::– 1– गुरु नानक देव–(1490–1539)

ये सिक्खों के अदि गुरु और सिक्ख धर्म के संस्थापक है । इनका जन्म '1469' ई. स. माना जाता है । इनका जन्म स्थान तलबंडी ग्राम में क्षत्रिय कुल में कालूराम वेदी के घर कार्तिक सुदी पूर्णिमा को हुआ था कुछ विद्वानों नें अक्षय –तृतीया को इनका जन्म माना है ।41– परंतु प्राण संकली में प्राप्त गुरु जी की जन्म कुण्डली से यह पुष्ट हो जाता है कि इनका जन्म कीर्तिक सुदी पूर्णिमा को ही हुआ था । किशोरावस्था से ही इन्हो नें ज्ञान चर्चा आरंभ कर दी थी । ये जन्मजात वैरागी ,भक्त एवं ज्ञानी थे । धार्मिक सुधार की प्रवृत्ति भी इनमें बाल्यकाल से ही परिलक्षित होती थी ।
अठ्ठारह वर्ष की आयु में चीना जाति की क्षत्रिय कन्या से इनका विवाह हुआ था। इनके दो पुत्र थे । जिनका नाम 'श्री चंद और लक्ष्मीचंद था। गुरु नानक देव जी नें गृहस्थ आश्रम का परित्याग नहीं किया । बल्कि जलकमलवत रहकर जगत के उद्धार के लिये अनेकानेक प्रयत्न किये । इन्हों नें चीन ,वर्मा , लंका ,मिश्र तुर्किस्तान ,रुस अफगानिस्तान , आदि देशों की यात्रायें की ।

गुरु जी की पहली यात्रा केवल भारत तक ही सीमित रही । जिसमें

इन्होने लाहौर, एमनाबाद, स्यालकोट दिल्ली काशी, पटना ,गया बंगाल, आसाम, जगन्नाथ, मध्यप्रान्त, राजपूताना, से होते हुये सुल्तान पुर पहुँचे ।42 – इनका यात्रा काल संवत 1556 से 1566 तक रहा । इनकी दूसरी यात्रा दक्षिण के लिये अर्थात रामेश्वर ,सबूर, भकेर, शिवकांची, तथा लंका तक हुई । वहां से ये लौटकर तलवंडी पधारे ।43– इनका यात्रा काल 1575 से 1577 तक रहा है।

गुरु जी की चौथी यात्रा जामपुर, राजनपुर, शिकारपुर, लरकाना, हैदराबाद, करांची, से चलकर बलोचिस्तान , मक्का –मदीना , बगदाद, रोम ,ईरान , अफगानिस्तान, आदि प्रदेशों में हुई ।

पांचवी यात्रा के दौरान गुरु जी केवल पाकपटन, तक गये कुछ विद्वान इस पांचवीं यात्रा के लिये अधिक सहमत नहीं हैं । 44– पाकपटन से कंगन पुर ,कसूरपट्टी और नारोवाल भी गये गुरु जी नारोवाल से सैयद पुर गये । जहां बाबर नें उन्हें बन्दी बना लिया । जीवन के तीस वर्षो की यात्रा करके गुरु जी करतार पुर रहे । एवं शिष्यों को अपनें वचनामृत से तृप्त करते रहे । ऐसा कहा जाता है कि गुरु नानक ,कबीर ,वासुदेवशास्त्री, तथा अन्य संतों काशी में मिले थे । बाबर के यहां बन्दी होनें की बात भी पांचवीं यात्रा से संबद्ध हैं यहां तक गुरु जी के बन्दी जीवन का प्रश्न है यह अनुमान लगाया जाता है कि शायद उच्च व्यक्तित्व वाले गुरु जी को लोधी तथा बाबर नें बंदी न बनाया हो । सैयद पुर की घटना के विषय में 'बाबरनामा' में इसका कोई संकेत नहीं मिलता है । इसी प्रकार कबीर से हुई भेंट भी तथ्यों पर सही नहीं उतर रही है । कबीर का काशी में रहना संदिग्ध है । अपनें पिता के देहवसान के बाद गुरु जी निरंतर दस वर्ष तक करतारपुर में उपदेश दे रहे थे । उन्होनें कोई अतिरिक्त यात्रा नहीं की । वे सत्य और धर्म के हिमायती थे । ऊँच–नीच ,जाति–पांति के वे विरोधी थे । इन्होनें घूम–घूम कर मानव प्रेम ,सेवा त्याग, संयम, और भगवद्–भक्ति का उपदेश दिया । इनका व्यक्तित्व असाधारण था । इनमें

पैगम्बर,दार्शनिक ,राजयोगी, गृहस्थ , त्यागी, धर्म सुधारक , कवि, संगीतज्ञ , समाजसुधारक, देश–भक्ति विश्व बंधुत्व सभी के गुण उत्कृष्ट मात्रा में विद्यमान थे । इनकी संकल्प शक्ति में अद्वितीय बल था । इनमें विचार शक्ति और कियाशक्ति का अभूतपूर्व सामंजस्य था और और विनोद–प्रियता भी कूट–कूट कर भरी थी । ये बड़ी से बड़ी शिक्षायें विनोंद में ही करते थे करतारपुर में ही बस कर इन्होनें आदर्श समाज की व्यवस्स्था की । डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार इनके भक्तों की त्याग भावना ,कष्ट सहन करनें की शक्ति और अपार धैर्य को देखा जाये , तो यह मानना पड़ेगा कि जैसी अद्भुद प्रेरणादायनी शक्ति इनकी वाणियों नें दी है , वैसी मध्ययुग के किसी अन्य संत की वाणियों नें नहीं दी है । इतिहास साक्षी है कि सिक्ख भक्तों को दीवार में चिन दिया गया था ,फॉसी पर लटका दिया गया और अत्यंत अमानुषिक पीड़ायें दी गई –फिर भी इन भक्तों नें निराशा या पराजय का भाव नहीं दिखाया । इनकी महिमा अतुलनीय है , इनकी वाणियों में मनुष्य के अन्दर इतना बड़ा अपराजय आत्मबल और कभी न समाप्त होनें वाला साहस पैदा हो जाता है । महला 1 में इनकी रचनायें संकलित है ।

2–गुरु –अंगददेव :–

ये सिक्खों के द्वितीय गुरु थे । इनका जन्म ई. स. 1504 'मत्ते दी सराय' (फिरोजपुर जि.) में गांव के निवासी भाई फेरुमल चीना'क्षत्रिय ' के यहां हुआ था । इनका जन्म नाम 'लहना' था । प्रारम्भ में ये दुर्गा के अपूर्व उपासक थे । गुरु नानक देव के व्यक्तित्व नें इन्हें चुम्बक की भांति अपनी ओर खींच लिया ।गुरु में इनकी अपार श्रद्धा और भक्ति थी । इनकी गुरु भक्ति से प्रसन्न होकर नानक जी ने इन्हें 'अंगद' नाम दिया । इन्हें द्वितीय नानक के नाम से भी जाना जाता था । इनकी वाणी महला न. 2 के अंर्तगत आदि ग्रंथ में संग्रहित हैं । गुरु अंगदेव जी अपनें शिष्यों में से भल्ला वंशीय अमरदास जी को बहुत चाहते थे ।

3– गुरु अमरदास::–(1479ई–1574ई)

ये सिक्खों के तृतीय गुरु हुये । इनका जन्म 1479 ई. 'बासर के ग्राम जि. अमृतसर' में हुआ । ये कट्टर वैष्णव थे । प्रति एकादशी का ब्रत करते थे । इनकी गुरु भक्ति बड़ी श्लाघनीय और अनुकरणीय रही । ये महान तितिक्षु और महान वैराग्यवान थे । इनकी रचनायें ग्रंथ साहिब के 'महला'3 के अंर्तगत उपलब्ध होती थी ।

4–गुरु रामदास::– (सन् 1534ई.–1581ई.)

ये सिक्खों के चतुर्थ गुरु हुए । इनका जन्म 1534 ई. सन् चूने मंडी 'लाहौर में हुआ था । प्रारंभ में इनको जेठा के नाम से जाना जाता था । अल्पायु में ही इनके माता पिता का देहांत हो गया। नव वर्ष की अल्पायु में ही ये गुरु अमरदास जी के सेवा में संलग्न हो गये । ई. सन् 1553 में गुरु अमरदास जी की पुत्री 'बीबी भानी' के साथ इनका विवाह हुआ । रामदास जी परम् गुरु भक्त होनें के कारण अपनें गुरु के आदेशानुसार ई. सन् 1570 में 'अमृतसर' बसना प्रारंभ किया । 1574 ई. में 'गोइंदवाल' में इन्हें गुरु गद्दी प्राप्त हुई । इनके तीन पुत्र 'रत्न' हुये । पृथ्वीचन्द्र, महादेव, एवं अर्जुन देव, । तीसरे पुत्र अर्जुन देव ही आगे चलकर सिक्खों के पांचवें गुरु सिद्ध हुये । रामदास जी 1581 ई. में 'ज्योति–ज्योति में लीन हो गये । श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इनकी वाणियां 'महला' 4 के नाम से उपलब्ध होती हैं ।

गुरु अर्जुन देव::–(1563ई.–1606ई)

ये सिक्खों के पांचवे गुरु थे । इनका जन्मकाल 1563 ई ,जन्म स्थान गोइंदवाल था । 1581 ई. में गोइंदवाल में इन्हें गुरु गद्दी प्रदान की गई 1581 में ही ये अमृतसर चले आए एवं 1588 ई. में इन्हो ने ही प्रसिद्ध गुरु द्वारा 'हर मंदिर साहिब ' की नींव रखी । अर्जुन देव जी ने ही 1590 में तरनतारन एवं 1593 ई. में करतारपुर बसाया । सन् 1595 में हरगोविन्द के रुप में इन्हें तीसरा पुत्र रत्न प्राप्त हुआ । अतयंत श्रम के बाद अर्जुन देव जी ने 'ग्रंथ साहब

' का संकलन किया । सन् 1604 ई में हर मंदिर में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की स्थापना की गई । बाबा बुड्ढा इसके प्रथम ग्रंथी नियुक्त हुये । गुरु अर्जुनदेव जी को विभिन्न प्रकार कष्ट दिये गये । परंतु उन्हों नें सभी कष्टों को हंस–हंस कर सहन किया । सिक्ख – धर्म की गौरव रक्षा के लिये मई , सन् 1606 ई. में ये शहीद हो गये । श्री गुरु ग्रंथ साहब के वर्तमान रुप देने का सारा श्रेय गुरु अर्जुन देव जी को ही जाता है । इन्हीं की रचनायें ग्रंथ साहब में सबसे अधिक मिलती हैं । जोकि 'महला पंजवा' के नाम से संग्रहित है ।

इनके पश्चात होने वाले तीनों गुरुओ –छठे हरगोविन्द जी (1595ई. 1644ई.) सातवें गुरु हरराय (1630ई. –1661ई.) और आठवें गुरु हर किशन (1656–1664ई.) की कोई भी वाणी ग्रंथ साहिब में नहीं मिलती ।

6–गुरु तेग बहादुर –(1621ई.–1675ई)

ये सिक्खों के नवम् गुरु कहलाये । जो कि सिक्खों जो कि सिक्खों के छट्ठे गुरु हरगोविन्द जी के पुत्र थे । इनका जन्म सन् 1621ई. में 'गुरु के महल '–अमृतसर– में हुआ ।ये बचपन से ही वैरागी –वृत्ति के थे । परम् शान्त ,आध्यात्मिक वृत्ति के थे । अपना अधिक समय 'बकाला ' नामक स्थान में परमात्म चिंतन में ही व्यतीत करते थे । गुरु तेग बहादुर जी को सन् 1664 ई 'बकाला' में गुरु गद्दी का उत्तरदायित्व सौपा गया । सन 1666 ई. पटना शहर में गोविन्दराय का जन्म हुआ था । सन् 1675 ई. में गुरु तेगबहादुर जी नें देश की कल्याण भावना के और धर्म संस्थापना हेतु अपने को औरंगजेब की प्रचंड धार्मिक द्वेषाग्नि की आहुति बनाया । ये हंसते–हंसते शहीद हुये । इनकी वाणियां श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'महला नव' के नाम से संग्रहित है ।

7– गुरु गोविन्द सिंह ::–(1666ई.–1708ई.)

ये सिक्खों के दसवें और अन्तिम गुरु थे इनका जन्म सन् 1666 ई में पटना 'बिहार' में हुआ था । तेगबहादुर जी के पश्चात इन्हों ने गुरु गद्दी का कार्य भार संभाला । इन्होनें अपनीं संगठन शक्ति के आधार पर सिक्ख जाति

को अपूर्व शक्तिशाली जाति में परिणत किया । अनंगपाल के पश्चात गुरु गोविन्द जी के तुल्य कोई भी पंजाब में नेता नहीं हुआ । ये धार्मिक नेता के साथ–साथ सच्चे राष्ट्रीय नेता थे । इन्होने जातिप्रथा के भेदभाव को मिटाकर सभी सिक्खों को समान अधिकार दिया । उन्होंनें सामूहिक उपासना की विधि बताई । उन्हें 'अमृत छकनें ' की महत्ता बताकर उन सबके लिये बाहरी एकता (कंघी, कच्छा, केश ,कड़ा ,कृपाण) में समानान्ता लाकर पंथ का निर्माण किया गुरु गोविन्द सिह जी नें सिक्खों को आंतरिक शक्ति प्रदान की । इन्होनें सिक्खों को वाह्य और आंतरिक दोनों ही प्रकार का अमृत पिलाया । इन्होने आध्यात्मिक उपदेशों द्वारा सिक्खों के व्यक्तिगत अहंभाव को नष्ट कर दिया । इन्होने सिक्खों के संमुख सेवा ,त्याग और राष्ट्रप्रेम के अद्वितीय आदर्श रखे । इन्होने भारतीय साहित्य का इसलिये अनुवाद किया कि पंजाब –निवासी भारतीय वीरों के त्यागमय आर्दश को समझे यह भी अनुभव करे कि रावणत्व पर रामत्व की विजय अवश्यम्भावी है । इन्होने अपने चारो पुत्रों की बलि इसलिये दी कि उनके सहस्रों पुत्र आनंद से जीवन यापन कर सके । ये जीवन पर्यन्त अन्याय को मिटाने के लिये युद्ध करते रहे गुरु गोविन्द सिंह का नाम धर्म सुधारकों के साथ'साथ राष्ट्–उन्नायकों में भी अग्रण्य हैं । गीता के प्रसुप्त आदर्शों को इन्हों नें फिर से जाग्रत किया है । इन्होने लोक और परलोक में तथा व्यवहार और अध्यात्म में अद्वितीय सामंजस्य स्थापित किया । ये पूर्ण निष्काम कर्मयोगी थे । इन्होने गुरु गद्दी के लिये भीषण संघर्षो का अनुमान कर गुरुत्व का समस्त भार 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में केंद्रिभूत कर कर दिया ।

भक्तगण::–

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरुओं की रचनाओं के अतिरिक्त विभिन्न संप्रदाय के भक्तों की रचनाये भी संग्रहित है । ईसा की बारहवीं शताब्दी के मध्य से लेकर सोलहवीं शताब्दी के मध्य तक की विचारधारा इन भक्त कवियों में पाई जाती हैं । विद्वान मैकालिक प्रभृति इन भक्तों की संख्या सोलह मानते है ।

परंतु ट्रम्प और गोकुलचंद नारंग इनकी संख्या केवल 14 मानते हैं । दोनों ही विद्वान 'मीराबाई' और परमानन्द' का नाम छोड़ देते है। भक्तों के नाम समयानुक्रम में निम्नांकित प्रकार से है।

1—जयदेव::— प्रसिद्ध ' गीत गोविन्द' के रचयिता इनको माना गया है । परंतु इनकी जन्म तिथि अज्ञात है । ईसा की बारहवीं शताब्दी इनकी जन्म तिथि मानी जाती है । पं. परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार इनका जन्मस्थान उड़ीसा और कर्म स्थान बंगाल है ।

2—नामदेव::— इनकी भी जन्मतिथि आज्ञात है । इनका जन्मस्थान बंबई प्रान्त के सतारा जिले में माना गया है ।

3—त्रिलोचन::— ये नामदेव के समकालीन माने जाते है। । इनकी जन्मतिथि 1267ई. और जन्मभूमि बंबई प्रान्त है ।

4—परमानन्द ::—इनकी जन्मभूमि तो अज्ञात है परंतु इनकी जन्मभूमि बंबई प्रान्त मानी जाती है ।

5—सदना::— इनका जन्मस्थान सिन्ध प्रान्त था एवं ये कसाई का व्यवसाय करते थे ।

6—बेनी::— इनकी जन्मतिथि तथा जन्मभूमि अज्ञात है । मैकालिफ के मतानुसार इनकी जन्मभूमि कदाचित् उत्तर प्रदेश है ।

7—रामानन्द::—इन्होंने भक्ति का मार्ग सबके लिये सुलभ बनाया । काशी के प्रसिद्ध वैष्णव धर्म के आचार्य थे । उत्तर भारत में इन्होनें भक्ति की मंदाकिनी बहाई जहां इनके असंख्य शिष्य थे ।

8—धन्नाजाट::— ये जाति के जाट थे इनका जन्म 1415 ई. में राजस्थान में हुआ था।

9—पीपा ::—इनकी जन्मतिथि 1425ई. मानी जाती है इनका जन्मस्थान उत्तर प्रदेश है ।

10—सैन::— ये जाति के नाई थे एवं बांधवगढ़ के राजा के यहां सेवा—कार्य किया करते थे । ये रामानन्द के शिष्य थे।

11—कबीर::—ई. सन् 1455 में इनका जन्म काशी में हुआ । विधवा ब्रह्मणी के परित्यक्त पुत्र थे । नव विवाहित दम्पत्ति नीरु और नीमा नें इनका पालन पोषण किया । रामानन्द जी के शिष्यों में ये अग्रगण्य स्थान पर आते है आगे चलकर ये प्रसिद्ध संत और कांतिकारी सुधारक हुये ।

12— रैदास::— 'रविदास' ये भी रामानन्द के शिष्यों में से थे । ये जाति के चमार और जूता गांठनें का व्यसाय करते थे । कबीर के समकालीन एवं अत्यंत शांत स्वभाव के थे

13—मीरा बाई::— इनका जन्म 1504 ई. के लगभग हुआ था । कृष्ण भक्ति के अंर्तगत इन्हें अनें प्रकार की यातनायें सहन करनी पड़ी फिर भी ये अपनें पथ से किंचिन मात्र भी विचलित नहीं हुई । सगुण उपासिका के साथ—साथ इनपर निर्गुण का प्रभाव बड़े पैमानें पर रहा ।

14—फरीद::— ये जाति के मुसलमान थे । इनका जन्म स्थान पश्चिमी पंजाब में रहा ।

15—भीखनः— संभवतः ये काकोरी के शेख भीखन थे इनका देहावसन अकबर के पूर्वाद्ध शासान काल में हुआ ।

16—सूरदास::— ये 'सूरसागर' के रचयिता'सूरदास' से भिन्न सूरदास थे । ये जाति के ब्राह्मण और अत्यधिक सुन्दर थे । इसी कारण ये 'सूरदास मदन मोहन' कहलाते थे ।

ग—भट्ट—समुदाय::— श्री गुरु गंथ साहिब में भट्ट समुदाय नें प्रथम पांच गुरुओं की स्तुति सवैया छन्दों में की है । इनके नामों , संख्यक के संबंध में विद्वानों में मतभेद है । मोहन दास जी नें 12 नाम गिनाये है । साहिब सिह नें इनकी संख्या 11 बतलाई है , शेरसिह जी नें यह संख्या 17 बतलाई है ।

घ—फुटकल वाणीकार::— इनमें सुन्दर मरदाना सत्ता और बलबंड की उपर्युक्त वाणीकारों की गणना होती है । सुन्दर का रामकली का सद् मरदाना की वाणी और सत्ता तथा बलबंड की कार भी ग्रंथ साहिब में संग्रहित है ।

:–ख–पंजाब के मध्य कालीन संत कवियों का दार्शनिक विवेचन

1– संतों की आत्मा– परमात्मा तथा सृष्टि जीव और जगत विषयक अवधारणा ::–

जीव परमात्मा के' हुक्म' से उत्पन्न होते हैं । गुरु नानक देव जी का जपुजी में कथन है कि परमात्मा के 'हुक्म' से सारी दृश्यमान और नामरुपात्मक वस्तुओं की उत्पत्ति होती है । उसके हुक्म के क्यों के संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है –45 । गउडी राग में भी इस बात का समर्थन किया गया है कि जीव परमात्मा के हुक्म से अस्तित्व में आते है और 'हुक्म' से ही फिर परमात्मा में समा जाते हैं । इस प्रकार के ज़ीव के आगे–पीछे हुक्म ही है– 46। जीव परमात्मा से उत्पन्न होता है और उसके अंर्तगत परमात्मा का निवास रहता है। परमात्मा एक ,ओंकार, सत्यस्वरुप ,कर्तापुरुष ,निर्भय, निवैर, अकालमूर्ति, अजोनी, स्वयंभू का सब जीव का अंर्तगत निवास है ,तो निःसंदेह अमर ही है–47। परमात्मा की अमरता के कारण ही जीव न मरता है न डूबता है –48। यद्यपि जीवन अनन्त है । वे सब एक ही सूत्र मे उसी भांति पिरोंये जाते है जिस प्रकार माला की अनेंक गुत्थियां एक ही सूत्र मे पिरोंई जाती हैं , किन्तु गांठ विभिन्न होती है । ठीक इसी प्रकार से जीव भी अनेंक हैं ,परंतु वे सब एक ही आत्मा के स्वरुप सूत्र में पिरोंये हुये है –49। गुरु अमर दास जी के मतानुसार इन अनंत जीवों को नारी के समान माना गया है सबका स्वामी एक परमात्मा 'पुरुष' ही है –50।– गुरु अर्जुन देव के कथनानुसार "कठपुतली बेचारी क्या कर सकती है ?" उस कठपुतली का सूत्र धार उसकी सारी गति –विधि को जान सकता है । उसका सूत्रधार उसे जैसा वेश धारण करायेगा ,उसे वैसा ही वेश धारण करना पड़ेगा। जीव की सारी शक्तियों का मूल स्रोत परमात्मा है । गुरुओं नें भी परमात्मा को जीवों का प्रेरक बतलाया है । गुरु

अर्जुन देव के मतानुसार जो उस परमात्मा को भाता है ,वही होता है । उसकी इच्छासे जीव कभी ऊँच योनियों में तो कभी नींच योनियों में वास करता है । कभी वह विपत्तियों से घिरकर शोक उद्विग्न होता है , तो कभी रागरंग में क्रीणा करता है । कहीं दूसरों के निन्दा करनें में हर्ष के कारण आकाश में ऊंची उड़नें भरता है ,और कभी चिन्ता के कारण पाताल में धंस जाता है । कभी ब्रह्मदेवता बनकर ब्रह्म चिंतन कराता है । जीवों को वह नाना प्रकार से नचाता है । कभी तो तमो वृत्ति के कारण सोता रहता है तो कभी भयानक क्रोध के वशी भूत हो जाता है । कभी विनम्रता के कारण सभी के पैरों की धूलि बन जाता है तो कहीं राजा बन बैठता है तो कहीं रंक । कभी बुरे कर्मों के फल सवरुप अपकीर्ति का भागी बनता है कभी भले कर्म करके भला कहलाता है । जीव उसी प्रकार जीवन व्यतीत करता है , जिस प्रकार प्रभु उसे जीवन व्यतीत कराना चाहता है । जीव कभी पंडित की स्थिति में आकर अन्य लोगों को उपदेश देता है तो कभी मौन धारण कर ध्यान लगानें की चेष्टा करता है । कभी तट तीर्थों में स्नान करता है , तो कभी साधक सिद्ध बनकर मुख से ज्ञान की बातें करनें लगता है । कभी कीट, हस्ति, पतंग आदि बन जाता है । इस भांति वह उसकी इच्छानुसार ही विभिन्न स्वांग धारण करता है –51। मनुष्य अल्पज्ञ , शक्तिहीन और गुणहीन है । परंतु जिस समय वह परमात्मा के भजन ,चिंतन में इतना निमग्न हो जाता है कि त्रिपुटी ज्ञाता, ज्ञेय ,ज्ञान अथवा ध्याता ध्येय ,एवं ध्यान अथवा आराध्य ,अराधक ,और अराधना का भाव मिट जाता है । उस समय वह साक्षत् परमात्मा का ही स्वरुप हो जाता है । ऐसे जीव और परमात्मा में में कोई अंतर नहीं रह जाता है ।

11– मन, बुद्धि और अहंकार विषयक चिंतन:–

उपनिषदों ,आर्यण्यकों एवं सांख्य योग आदि ग्रंथो में मन को बंधन और मोक्ष का कारण माना गया है । मन मानव शरीर का अत्यंत सूक्ष्म अंशहै। यह वह अदृश्य शक्ति है जिसके द्वारा संकल्प विकल्प होता है । मन के आठ

गुण है । संख्या, परिणाम, पृथकत्व, संयोग, वियोग, परत्व, अपरत्व, एवं संस्कार मन में ज्ञान एवं कर्म दोनों अंशों का समावेश है । वेदान्त शास्त्र में मन को ही चित्त की उपाधि दी गयी है । बौद्ध एवं जैन धर्म के अंतर्गत मन को छड़ी इन्द्रीय की उपाधि प्राप्त है । मन मानव शरीर की महान शक्ति है । पुराणों के अनुसार ब्रह्मा की उत्पत्ति मन और ब्रह्मा के मन से संरचना हुयी है । इस प्रकार सृष्टि का मूल कारण मन है–52। जिस प्रकार घोडे के लगाम से नियंत्रित होकर चलते है उसी प्रकार कान आदि इन्द्रियां मन से नियंत्रित होकर चलती है। यह आत्मा शरीर रुपी रथ में बधें अश्व रुप इन्द्रीय गण से खींचा जाता है –53। कठोपनिषद में भी मन की प्रबलता की ओर संकेत दिया गया है ।

आत्मानं रथिन विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ।।

श्री मद् भगवद्‌गीता में भी चंचल मन को बस में करना वायु के समान दुष्कर बताया जाता है –54।

भक्ति काल के लगभग सभी कवियों नें मन को डांटनें फटकारनें तथा फुसलानें की चेष्टा की है । कबीर, दादू, तुलसीदास, तथा सूरदास सभी में यह प्रवृत्ति पायी जाती है ।

गुरु नानक देव नें भी मन की विशद् विवेचना की है मन की विचारधारा कर अनुसरण अन्य संत कवियों नें किया है । 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में मन संबंधित अनेक पद पाए जाते है। इससे यह सिद्ध होता है कि सिक्ख गुरुओं नें मन के स्वरुप इसकी प्रबलता मनोमारण की विधि आदि को भली–भांति समझाया था गुरु नानक देव नें तन की उत्पत्ति आकाश आदि पांच तत्वों से मानी है । इनके अनुसार मन बड़ा लोभी और मूढ़ है –55।– गुरुओं के अनुसार मन के दो रुप है ।

1– ज्योर्तिमय, प्रकाशमय अथवा शुद्ध स्वरुप

2– अहंकारमय स्वरुप

1—ज्योर्तिमय मन से अथवा विशुद्ध मन से अहकारी मन का अहकार मिटता है जिससे उसे शांति प्राप्त होती है । इससे आनन्द की बधाई बजनें लगती है । गुरु नानक देव जी का कथन है कि इस ज्योर्तिमय मन में आध्यात्मिक धन निहित है । इसमें परमात्मा के नाम के माणिक, रत्न, हीरा आदि अंतरहित हैं ।

मनु महि माणकु लालु बासु रतनु पदारथु हीरु ।—56

गुरु अमर दास जी का कथन है कि ज्योर्तिमय मन के अंर्तगत परमात्मा के धन का अद्‌भुद खजाना है ।

मन मोरिया अंतरि तेरे निधानु है ।
बाहरि बसतु न भलि ।।—57

गुरु अर्जुन देव नें ज्योर्तिमय मन की महत्ता को इंगित करते हुये ये कहनें का प्रयास किया है कि आगम परमात्मा के स्वरुप का ज्योर्तिमय मन में स्थान है । ज्योर्तिमय मन में परम आनन्द के अमृत कुण्ड भरे पड़े हैं । जिसे इन अमृत कुण्डों की प्राप्ति होती है वहीं इनका रसस्वादन कर सकता है —58 ।

गुरु अर्जुन देव नें एक आध्यात्मिक रुपक द्वारा ज्योर्तिमय मन की विशद विवेचना की है ।

मन मंदरु तनु, साजि बारि। इस ही मधे वसतु अपार।।
इसहि भीतरि सुनिअत साहु। कवनु वापारी जा का उहा विसाहु।।
नाम रतन को को बिउहारी। अमृत मोचन करै आहारी।।—59

ज्योर्तिमय मन रुपी महल के चारों तरफ शरीर की चार दिवारी बनी हुई है इस महल में परमात्मा रुपी धन की अगणित वस्तुएं विद्यमान है । महल के भीतर परमात्मा रुपी साहूकार बैठा है । जो मन रुपी महल को लांघता है । वही ज्योर्तिमय मन रुपी महल में प्रविष्ट होकर परमात्मा रुपी साहू का साक्षात्कार कर सकेगा । वहां पहुचनें पर उसे अमृत 'रुपी भोजन खानें को मिलेगा । जिससे उसकी तुष्टि—पुष्टि और क्षुधा निवृत्त होगी । वह उस साहू के साथ

2—अहकार युक्त मन—मन का दूसरा स्वरुप मोहनी माया से मोहित तथा अहकार से भरा हुआ है । इससे वह बार बार अनेक योनियों में भ्रमण करता है । माया सक्त मन अत्यंत प्रबल है । अनेक उपाय करनें पर भी वह मनुष्य को नचाता रहता है ।

"इहुं मनुआ अति सबल है , छड़ै न कितै उपाइ ।
दूजै भाइ दुखु लाइया, बहुती देइ सजाइ ।"—60

मन का स्वभाव बड़ा चंचल है यह बहुरंगी है और दसों दिशाओं में घूम—घूम कर चक्कर मारता फिरता है यह अपनीं चंचलता के कारण कभी भी आकाश में सैर करता है कभी पाताल में विचरता है । गुरु नानक देव नें इसकी चंचलता की समानता वायु की चंचलता से की हैं ।

मनुआ पउण विंद सुखवासी नामि वसै सुख भाई ।।—61

गुरु अर्जुन देव जी के कथनानुसार मन तेली के बैल की भांति है ।

धावत कउ धावहि बहु भाती, जिउ तेली बदलु भ्रमाइयो ।।—62

मन माया के पीछे उसी भांति चक्कर लगाता है , जैसे तेली का बैल कोल्हू के इर्द—गिर्द घूमता रहता है । गुरु अर्जुन देव जी के मतानुसार "यह मन महर, मलूक, और खान होकर अनेक भोग भोगता है । इस मन की सवारी भी वायु के समान तीव्र गामी घोड़सवारी है , कभी ये चोवा—चंदन लगाता है तो कभी ये सेज पर सुंदरियों के साथ रमण करता है । कभी नाट्यशाला की रंगस्थली में नटों को गाना सुनाता है तो कभी सभा के सजे—संवरे कालीन —रुपी तख्तो पर बैठता है । उद्यानों के सभी मेंगवों का रसास्वादन किया , आखेट में रुचि दिखलाता है अन्य राजाओं की लीलाओं ,अनेंक प्रपंचों और उद्यमों में प्रवृत्ति होता है , इतने भोग —भोगनें के बावजूद भी यह मन तृप्त नहीं होता है—63 । गुरु तेगबहादुर जी भी कहते है कि 'यह मन इतना हठीला है कि

इसे लाख समझानें पर भी यह एक नहीं सुनता । यह अपनीं बुरी मति को नहीं त्यागता । ये अनेंक प्रपंचों द्वारा संसार को छलता है और अपना ही पेट भरता है । इसका स्वभाव कुत्ते की पूँछ की भांति है । कुत्ते की पूँछ चाहे कितनी भी बार सीधी क्यों न की जाय पर उसे स्वतंत्र छोड़नें पर वह टेढ़ी ही रहती है , ठीक उसी प्रकार मन को कितनी ही शिक्षायें क्यों न दी जाय , पर वह करता अपनें स्वभाव का ही है "–64।

मन, काम, कोध ,लोभ, अहंकार, खोटी,बुद्धि तथा द्वैत भाव के वशीभूत है। । इन्हीं कारणों से वह आध्यात्मिक विकास में उन्नति नहीं कर सकता ।

"ना मनु मरै, न कारज होइ।
मनु बसि द्वता दुरमति दोइ।
मनु मानै गुरते इकु होइ ।।–65

<u>3– माया का स्वरुप और जगत पर उसका प्रभाव::–</u> माया का स्वरुप त्रिगुणात्मक है गुरु अर्जुन देव जी के अनुसार 'इसके मत्थे में त्रिकुटी है । इसकी दृष्टि बड़ी ही कूर है । जिह्वा फूहड़ि होने के कारण सदैव कड़े वचन बोलती है । सदैव भूखी रहती है और प्रियतम को सदैव दूर समझती है । परमात्मा नें ऐसी विलक्षण स्त्री की रचना की है । उस स्त्री नें सारे जगत को खा लिया है किन्तु गुरु नें मेरी रक्षा की है । इससे अपनीं 'ठगभूरि ' से सारे संसार को वशीभूत कर लिया है । इसके प्रभाव से ब्रह्मा ,विष्णु ,महेश भी मोहित हो गये ।

"माथै त्रिकुटी दृष्टि करुरि । बोले कउड़ा जिहवा की फूड़ि।
सदा भूखी पिरु जानै दूरि । ऐसी इसत्री इक रामि उपाई ।
उनि सभु जगु खाइया ,हमि गुरि राखे मेरे भाई ।।
पाइ ठगउली सभु जगु जोहिया । ब्रह्मा विष्णु महदेउ मोहिया।
गुरुमुखि नामि लगे से सोहिया ।।–66।

माया के त्रिगुणात्मक स्वरुप को ही सृष्टि लीला का क्रम निरतर चलता है । गुरु ग्रंथ साहिब में इसकी प्रबलता के सकेत विभिन्न स्थानों पर मिलते है ।

गुरु अर्जुन देव जी के कथनानुसार –"यह ऐसी सुंदरी है जो कि बलात् मन को मोह लेती है ,जो घाट –बाट और प्रत्येक गृह में बन ठन कर दिखलाई पड़ती है । यह तन,मन, को अत्यंत मीठी लगती है , शब्द ,स्पर्श,रुप ,रस, तथा गंध का स्वरुप धारण कर मन और ,तन को बरबस अपनें ओर खींच लेती है ।

किन्तु गुरु प्रसाद से मुझे यह बुरी ही दिखाई पड़ती है । काम, क्रोध , लोभ, मोहादिक ,माया के द्वारा बांधे गये है ।

ऐसी सुंदरी मन कउ मोहै । घटि–घटि गृहि बनि–बनि जोहै।।
मनि ,तनि लागै होइ कै मीठी । गुरु प्रसादि मै खोटी डीठी।।
अगरक उसके बड़े ठगाऊ । छोडहि नाहि बाप न माउ।।
मेली अपनें उनि लै बांधें।।–67

माया के रुप असीम है ये विभिन्न प्रकार के रुप धारण कर जगत को मोहित करते है । सुत,भाई,घर, स्त्री, धन, यौवन ,लालच, लोभ का स्वरुप धारण कर जगत को ठगती है ।

"तसना माइया मोहिणी सुत बंधप घर नारि।
धनि जोबन जगु ठगिइया ,लवि लोभी अहंकारि।।–68

त्रिगुणात्मक माया में सत्व,रज, और तम गुणों की पृथक भिवृद्धि के कारण विभिन्न प्रकार के फलों की प्रप्ति होती है । सत्व गुण की धिकता से उत्तम फल की रजोगुण की अधिकता के कारण –मध्यम फल एवं मो गुण की अधिकता के कारण अधम फल की प्रप्ति होती है ।

त्रितीया त्रैगुण बिरवै फल कब ऊतमु कब नीचु।
नरक सुरग भ्रम उधणों सदा संघारे मिचु।।–69

नानक जी के अनुसार भी माया अनन्त है । माया की अनन्तता ही

इसके स्वरुप की सबसे बडी विशेषता है । नानक जी के कथनानुसार ''जो कुछ भी दिखाई पडता है , सुनाई पडता है सब तेरी कुदरत है इस ससार के सुख भी सब कुदरत के ही परिणाम है । आकाश और पाताल के बीच , सारा दृश्यमान ,जगत वेद, पुराण, और कतेब तथा अन्य सारे विचार , जीवों का खाना पीना पहनना और संसार के सारे प्यार ,जातियां ,जिन्सों में रंगो में तथा जगत के सारे जीवों मे संसार की अच्छाइयों ,बुराइयों , मान'अभिमान, पवन, पानी, अग्नि धरती जहां भी दृष्टि की पहुंच है वहां तेरी कुदरत के दर्शन होते है । तूही कुदरत का सर्वत्र स्वामी और रचयिता है । वह प्रभु सर्वत्र अकेला ही विराजमान है –70।

गुरु नानकदेव कुदरत की अनंतता को स्पष्ट करते हुये जपुजी में इस प्रकार कहते है। कि –

कुदरति कवण कहा वीचारु। वारिया न जावा एक बार ।।

–जपूजी–

हे प्रभू ,मै तेरी कुदरत की, ताकत, शक्ति , प्रकृति अथवा माया के वर्णन नहीं कर सकता यह तो आश्चर्यजनक है एवं इसपर मै अनेको बार बलिहारी जाता हूँ –71। माया के सबसे बडे आकर्षण कामिनी और कंचन है ये दोनों माया के सबसे मीठे मोह है । इनसे कोई बिरला ही बच पाया है ।

''कंचनु नारि महि जिउ लुभत है , मोहु मीठा माइया।।–72

परमात्मा की माया अत्यंत व्यापक है और प्रबल है । यह अपनें अनेकात्मक रुप के कारण समस्त रुपों में व्याप्त है । कहीं यह हर्ष, शोक के रुप में तो कहीं स्वर्ग,नरक और अवतारों के बीच रमण करती है । हाथी, घोडे, सुंदर वस्तुओं में उसी का साम्राज्य है । रुप यौवन ,राग,– रंग, मखमली सेजों, महलों विभिन्न प्रकार के श्रृंगारों में माया का ही रुप दृष्टि गोचर होता है ।

गुरु अर्जुन देव के मतानुसार – 'माया नें अपने तीनों गुणों 'सत्व, रज, तम,' से समस्त भुवन को चारों दिशाऍं अपनें वशीभूत कर रखी है ।

यज्ञ, स्नान तथा तप करनें वाले समस्त स्थान इसके वशी भूत है –73। मोहिनी शक्ति के कारण ही इसका प्रभुत्व सारे संसार पर व्याप्त है ।

माइया मोहि सगलु जगु छाइया ।
कामणि देखि कामि लोभइया।।
सुत कंचन सिउ हेतु बधाइया।–74
त्रैगुण बिखिया अंधु है माइया मोह गुबार।।–75
त्रैगुण माइया मोहु पसारा संभ बरते अकारी ।
तिहि गुणी त्रिभुवणु बियापिया।।–76

स्वर्ग–नरक ,अवतार, सुर–देव, इत्यादि सभी इसी माया के आधीन हैं ।

"त्रिहु गुण महि वरते संसारा।
नरक सुरग फिरि अवतारा ।।–77

बड़े–बड़े पंडित ,ज्योतिषी ,माया के व्यापार भूले रहते है। पंडित लोग चाहे चारों युगों तक वेद पढ़ते रहें , किन्तु उनके आन्तरिक मल की निवृत्ति नहीं होती है । त्रिगुणात्मक माया के मूल में अहंकार के वशी भूत वे नाम को भूलकर नाना प्रकार के कष्ट पाते हैं ।

'पंडित मैलु न चुकई , जे वेद पडे जुग चारि।
त्रैगुण माइया मूलु है , विचि हउगै नामु विसारि।।–78

त्रिदेव , ब्रह्मा विष्णु, महेश भी माया के वशी भूत है। गुरु अमरदास ती के मतानुसार माया का संकेत इस प्रकार से किया गया है कि–

"ब्रह्में वेद वाणी परगासी माइया मोहि पसारा
महादेव गियानी बरते धरि तामसु बहुत अहंकारा।
किसनु सदा अवतारी रुधा कितु लागि तरै संसारा।।–79

अर्थात कि माया ही के प्रभुत्व के कारण ब्रह्मा नें यद्यपि चारों वेदों की वाणी का प्रकाशन किया है लेकिन फिर भी माया मोह के प्रसार

से अलग नहीं हो सके। यद्यपि महादेव ज्ञानी स्वं में ही मस्त रहते है। , परंतु उनमें भी माया रुपी तमोगुण और अहं भाव प्रचुर मात्रा में विद्यमान है । कृष्ण अर्थात विष्णु सदैव अवतार ही धारण करनें में फंसे रहते हैं । त्रिदेवों की माया के कारण यह दशा है ।

"माइया मोहे देवी सभि देवा।'–80

इस प्रकार माया की व्यापकता सामान्य जीवों से लेकर ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश पर समान रुप से छाई हुई दृष्टिगत होती है ।

4–जीव मनुष्य और आत्मा विषयक चिंतन::–

जीव स्वप्न तुल्य मायिक पदार्थों के पीछे पड़ा रहता है ,जिसमें वह अपनें अमरत्व स्वभाव को भूलकर बद्ध हो जाता है । राज भोग में वह परमात्मा को भूल जाता है । प्रति दिन की दौड़ –धूप में ही उसकी सारी आयु व्यतीत हो जाती है । जीवों के अंर्तगत परमात्मा का निवास है । साधनों के माध्यमों से इसी परमात्म–तत्व की अनुभूति जीव को हो जाती है एवं वह अपनें अहंभाव को भूल जाता है एवं उस परमात्मा से मिलकर एक हो जाता है । इस प्रकार जीव की उत्पत्ति परमात्मा से ही होती है तथा उसी में पुनः सम्लित होकर एक हो जाते है।

"तुझते उपजहिं तुझ माहि समावहि" ।–81

जिस प्रकार जल की तरंगें और फेन जल के साथ मिलकर जब एक हो जाते है ,उसी प्रकार से जीवात्मा तथा भ्रम के त्यागनें से परमात्मा के साथ मिलकर एक हो जाता है एवं अपनें नाम तथा रुप को त्याग कर परब्रह्म बन जाता है । गुरु अर्जुन देव के कथनानुसार "जिस प्रकार जल 'मे समुद्र आकर मिल जाने से जल शांत हो जाता है उसी भांति जीवों में स्थित परमात्मा की ज्योति ,परमात्मा की अखंड ज्योति से मिलकर एक हो जाती है ,तो जीव का सारा आवागमन समाप्त हो जाता है और उसे महान शांति प्राप्त होती है –

"जिउ जल महि जलु आइ खटाना ।
तिउ जोति संगि जोति समाना।।
मिटे गये गवन पाया विस्राम।।82

मनुष्य इस लोक की जीव सृष्टि का सबसे चेतनशील प्राणी है परमात्मा की विशिष्ट चेतना उसमें उत्कृष्ट रुप में पायी जाती है । गुरुओं की दृष्टि में मनुष्य योनि सर्वोत्कृष्ट योनि है । मनुष्य योनि अत्यंत दुर्लभ है –

माणसु जनमु गुरुमुखि पाइओं ।–83

मनुष्य योनी की प्रप्ति बड़े भाग्य के फल स्वरुप होती है। अनेक जन्मों के पुण्यो के फल स्वरूप मानव'तन की प्राप्ति होती है ।

"फिरत–फिरत बहु जुग हारियो मानस देह लही।–84

मनुष्य योनि बार–बार प्राप्त नहीं होती इस लिये मनुष्य शरीर को प्राप्त कर मुक्ति का प्रयास तो अवश्य करना चाहिये ।–

"मानस देह बहुरि नहि पावहि, उपाय मुकति का करुरे।–85
भई परापति मानुख देहुरिया।
गोविन्द मिलण की इह तेरी बरिआ।।
आवरि काज तेरे कितै न काम ।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम।।–86

चौरासी लाख योनियों में से मनुष्य योनि ही मुक्ति की प्राप्ति की सीढ़ी है । जो अभागा इस सीढ़ी से एक बार फिसल जाता है वह फिर आवागमन के चक्कर में पड़ कर दुःख भोगता है ।

आत्मा की अमरता के संबंध में 'प्रतिपादन' गुरु ग्रंथ साहिब में भी वेदांत के अनुसार किया गया है । गुरु अर्जुनदेव जी के कथानुसार—

"शरीर के नष्ट होनें से आत्मा नष्ट नहीं होती ।" शरीर पंचभूतों से निर्मित है। शरीर नष्ट होनें पर उसके तत्व अपनें तत्वों में मिल जाते है । जैसे पवन तत्व पवन में ,अग्नि तत्व अग्नि में, जल तत्व जल में, मिलकर एक हो

जाते हैं ।

शरीर को आत्मा समझना भ्रम है । शरीर नश्वर है आत्मा शरीर से पृथक है । गुरु के भ्रम तोड़नें पर ही वास्तविक आत्म–तत्व की प्रतीति होती है। वास्तव में शरीर में स्थित आत्मा तो कभी नहीं मरती और न कहीं आती–जाती है । गुरु अर्जुन देव जी के के मतानुसार –"परमात्मा नें शरीर का निर्माण किया है और यह एक एक रोज मिट्टी में भी मिलना है यह भी सत्य है । ये अचेत शरीर के मूल में स्थित आत्मा को पहचानों । शरीर पर अभिमान करना व्यर्थ है । इस संसार में केवल हम कुछ दिन के मेहमान हैं । अन्य वस्तुयें हमारे पास परमात्मा की अमानत है । यह शरीर विष्ठा ,अस्थियों तथा रक्त का सम्मिश्रण है उनपर चमड़ा लपेटा हुआ है जिसपर अभिमान करना व्यर्थ है इस शरीर में स्थित आत्मा को जानने का प्रयास करो । इसी को जानकर अपवित्र से पवित्र बन सकते हो–87। अर्जुन देव जी नें आत्म स्वरुप को ही पूर्ण माना है। उसमें किसी भी प्रकार की न्यूनता नहीं है । आत्मा का ठीक–ठीक बोध होनें पर सारी खोज ,दौड़ –धूप, चंचलता समाप्त हो जाती है ,क्योकि सारी वस्तुयें उसी में स्थित है ।

आपु गइया ता आपहि। कृपा निधान की सरनी पए।
जो चाहत सोई जब पाइया। तब ढूँढन कहा को जाइया।।
अस्थिर भये बसे सुख आसन। गुरि प्रसादि नानक सुख वासन ।। –88

5–ईश्वर प्प्ति के उपायः–

भक्ति से ही मनुष्य जीवन सार्थक होता है और सारी दुबिधाओं की निवृत्ति भी होती है । वैसे तो ईश्वर प्रप्ति के कई उपकरण है परंतु गुरु ग्रंथ साहिब में जिन उपकरणों पर गुरुओं की व्यापक दृष्टि पड़ी है वे इस प्रकार है–
अः:– सद्गुरु प्राप्ति उनकी कृपा तथा उनका उपदेश ।

ब::–नाम,

क::– सत् संगति तथा साधू संगति

ख::– परमात्मा का भय तथा इनका 'हुक्म '

ग::– दृढ विश्वास

घ::– आत्म समर्पण का भाव ।

च::– परमात्मा का स्मरण और कीर्तन।

छ::– भग्वत कृपा

अ::– सदृगुरु की प्राप्ति में ईश्वर विधान होता है । सिक्ख गुरुओं के मतानुसार परमात्मा की अलौकिक कृपा से ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है । –गुरु की प्राप्ति हेतु अहं भाव को नष्ट करना परम आवश्यक है । तभी सद्गुरु की प्रप्ति संभव हा सकती है गुरु के उपदेश अर्थात गुरु के सबद में अमृत का निवास है–89। गुरु के सबद 'उपदेश' से जीवित ही मर जाने पर परमात्मा का पवित्र नाम हृदय में आ बसता है –90। बिना गुरु के 'सबद' के सारा संसार भटक कर दर–दर की ठोकरे खा रहा है बारंबार जन्म –मरण के चक्र में पड़ता है । गुरुवाणी मन में बसानें से माया के बीच रहते हुये भी निरंजन परमात्मा की प्रप्ति होती है और साधक की ज्योति परमात्मा की अखंण्ड ज्योति से मिलकर एक हो जाती है–91।

ब::– नाम– श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नाम की अपार महिमा का गुणगान हुआ है । नाम और नामी में किसी प्रकार का अंतर नहीं है दोनों एक हैं नाम ही नामी का प्रतीक है । सारी सृष्टि की रचना नाम ही के द्वारा हुयी है । नाम के बिना किसी भी स्थान का कोई अस्तित्व नहीं है –92। समस्त जीव ,खण्ड, ब्रह्माण्ड, स्मृति ,वेद, पुराण, श्रवण, ज्ञान ध्यान, आकाश पाताल, सारे दृष्यमान आकार नाम द्वारा ही धारण किये गये है –93। नाम से ही सब उत्पन्न होते हैं और नाम में ही समा जाते है –94। नाम ही चारों वेदों का सार है –95। नाम ही जप,तप, संयम

का सार है –96। नाम ही रतन ,जवाहर, सत्य, सतोष ,ज्ञान सुख दया का खजाना है और अनुपम भडार है–97 । नाम धरम परम धन है ,यह स्थिर और सत्य है । यह धन अग्नि के चोर और यमदूतो द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता–98। नाम के सौदे में लाभ ही है माया,मोह, सब दुख का रुप है । ये सब खोटे व्यापार है –99। नाम मे सारे पदार्थ और अष्ट सिद्धिया निहित हैं–100 । नाम की कीमत की 'मिति ' वर्णातीत है । सच्चे नाम की कीमत तिल मात्र भी वर्णातीत है –101।

क::– सत्संगति तथा साधू संग::– सत्संग करना प्रत्येक सिक्ख का नित्य कर्म–विधान है । जिस प्रकार पारस पत्थर के स्पर्श से लोहा कंचन में परिवर्तित हो जाता है उसी प्रकार पापी गण भी सत्संगति के प्रभाव से शुद्ध होकर गुरु मुख हो जाते है । संतजन पृथ्वी की तरह धैर्य शील , आकाश की तरह निर्विकार, सूर्य और हवा की तरह समदर्शी तथा अग्नि के तुल्य परोपकारी होते हैं –102।गुरु अर्जुन देव के अनुसार 'परमात्मा का नामोच्चारण ही उनका मंत्र है । पामात्मा कीर्तन ही उनका भोजन है । वे माया से जल में कमल की भांति अछूते हैं । शत्रु और मित्र को समान भाव से उपदेश देते है एवं ईश्वर में अटूट श्रद्धा रखते है । वे अपनें कानों से पराई निन्दा नहीं सुनते ,अहंकार को छोड़ सबके चरणों की धूलि बनें रहते हैं । वे शम, दम, श्रद्धा , समाधान, उपराम, तितिक्षा से युक्त होते हैं एवं यही साधू की कोटि में आते हैं –103। इतना ही नहीं बल्कि संतो और परमात्मा में कोई अंतर नहीं हैं । परंतु ऐसा संत पुरुष लाखों करोणों में एक ही होता है । संत जनों की प्राप्ति से गुरु वाणी में श्रद्धा होती है । गुरू वाणी के गान से कोध , ममत्व , पाखण्ड , भ्रम , अहंकार आादि दोषों का नाश होता है –104। साधू संग द्वारा हरि गुण गान करनें से सांसारिक पदार्थ स्वप्वत दिखाई पड़ते हैं ,तृष्णा समाप्त हो जाती है और स्थिरता प्राप्त होती है–105। माया के बंधन साधू संगसे शिथिल पड़ जाते है–106। इसी से नाम की महत्ताप्रतीत होनें लगती है जिसे भवसागर से पार

उतरा जा सकता है –107। साधू संग में निवास करनें से मन की मैल कट जाती है –108। त्रिविध तापों की शांति साधू संग से ही होती है–109। संतो की कृपा से नाम जप में मन लगता है ,अहंकार मिटता है । एकंकार परमात्मा सर्वत्र दृष्टि गोचर होता है और पंच कामादिक सहज ही वशी भूत हो जाते हैं –110 संतों की कायिक ,वाचिक और मानसिक सभी प्रकार की सेवा करनीं चाहिये ।

ख::– परमात्मा का भय तथा उनका –हुक्म':– परमात्मा के भय के वशीभूत होकर इन्द्र ,धर्मराज, सूर्य ,चन्द्रमा, सिद्ध, बुद्ध, सुर, नाथ, आकाश, महाबली, सभी अपनें नित्य कर्म में लगे रहते हैं । निर्भय केवल परमात्मा मात्र है –111। गुरु अर्जुन देव भी इस कथन की पुष्टि करते है उनके अनुसार सारी सामग्रिया भय से व्याप्त है । कर्ता पुरुष ही निर्भय है –112। नानक जी के कथनानुसार जिस तरह से अग्नि से धातुये शुद्ध होती हैं ,उसी प्रकार परमात्मा के भय से दुमर्ति रुपी मैल कटती है और जीव शुद्ध होकर परमात्मा के मिलन योग्य हो जाता है । परमात्मा का भय होनें से अन्य सांसारिक भय समाप्त हो जाते हैं । नानक जी के कथनानुसार –

स्वर्ग लोक, मर्त्य लोक,पाताल, धरती, पवन, पानी आकाश, जल, थल, त्रिभुवन, के सारे निवासी ,सांस, ग्रास, दस, अवतार, अगणित ,देव और दानव रुपी जीव परमात्मा के हुक्म के ही अधीन है –113।– यदि साधक अपनें आप को परमात्मा के साथ युक्त कर देता है तो उसका अहं भाव मिट जाता है , उसकी वासनायें शांत हो जाती हैं क्योंकि वह यही समझता हैं कि जो भी हो रहा है सब उसी की 'परमात्मा ' इच्छा अनुसार हो रहा है ।

ग::– दृढ़ विश्वास ::– जिसे परमात्मा के बल पर दृढ विश्वास है,उसके सारे मनोरथ पूर्ण होते है। और उसे कोई भी कष्ट नहीं होता है –114। प्रहलाद ,नामदेव ,और दौपदी के उदाहरण इसके साक्षी है । उसी विश्वास की रक्षा उन्होनें समय समय पर की हैं । दुष्ट हिरण्यकश्यप का हनन कर प्रहलाद की

HANSA MEHTA LIBRARY

रक्षा कर नामदेव को अछूत कहनें वाले की और मन्दिर का पिछवाड़ा कर नामदेव की ओर मंदिर का मुख्य द्वार कर ,दुष्ट दुःशासन से दौपदी की साड़ी का चीर बढ़ाकर रक्षा की । जिस प्रकार चरवाहा अपनीं गायों की रक्षा करता है ,उसी प्रकार परमात्मा अपनें भक्तों की रक्षा करता है –115।

घ::– आत्म–समर्पण भाव::– स्वयं को पापी ,अपराधी तथा परमात्मा को अत्यंत पतितपावन और क्षमाशील समझ कर उनके चरणों में कायिक, वाचिक, और मानसिक सभी दृष्टियों से सौप देना चाहिये यही 'आत्म समर्पण' का सच्चा रुप है । इसमें तन,मन धन सभी का आत्म सर्मपण होना आवश्यक है । नानक जी के अनुसार आत्म सर्मपण से अत्यंत निश्चितता हो जाती है । वे कहते है– हे प्रभू मुझे अन्य चिन्ताओं की फिक्र ही नहीं रहती क्योंकि 'अगम अपार' अलखु अगोचर ही हमारी चिन्ता करनें वाला है ।

च::– परमात्मा का कीर्तन स्मरण ::– प्रत्येक क्षण उस परमात्मा की ही स्मरण करना चाहिये । उठते, बैठते, सोते, मार्ग में चलते हुये सभी परिस्थितियों में स्मरण का अभ्यास करना चाहिये – आशा कूकरी ,यम जाल, काम, कोध , का नाश होता है और योनियों में बार–बार जन्म ग्रहण करना भी मिट जाता है–116प्रभु के स्मरण से सांसारिक सुखों की प्रप्ति होती है । गुरु अर्जुन देव जी के अनुसार "दुबला, भूखा, निर्धन, तिरष्कृत, अत्यन्त चिन्ता शील रोगी गृहस्थी के दुखों में जकड़ा हुआ प्राणी यदि प्रभु का स्मरण करता है तो परब्रह्म उसके चित्त में आ जाता है और उसकें तन तथा मन दोनों ही शीतल हो जाते हैं –117 संगीत का विश्व व्यापी प्रभाव है । सांप, मृग, आदि पर भी जीवों का प्रभाव इतना अधिक है कि वे एक निष्ट होकर संगीत सुननें में तन्मय हो जाते हैं कि उन्हें अपनें प्राण गवां देनें की भी सुधि नहीं रहती । मनुष्य हृदय –दिव्य भावनाओं से ओत–प्रोत , संगीत की मंदाकिनी में अभिसिक्त वाणी निष्ठुर हृदय को भी द्रविभूत कर देती थी ।

छ::– प्रभु कृपा::– परमात्मा की कृपा अनिवर्चनीय है , वर्णनातीत है। प्रभु की

कृपा से ही साधू संगति प्राप्त होती है । परमात्मा की कृपा से गुरु की प्रप्ति होती है और वही नाम को दृढ़ कराता है । उसकी ही महत्तम अनुकंपा से नाम रुपी अलौकिक रत्न की प्राप्ति होती है।

1, मुण्डकोपनिषद,मुण्डक–1,खण्ड–2,मन्त्र –12
2, श्रीमद्भागवद्गीता , अध्याय –2 ,श्लोक–7
3, वही, अध्याय –4, श्लोक –34
4, हिन्दी साहित्य की भूमिका ,हजारी प्रसाद द्विवेदी , पृ. 65
5, श्री गुरूग्रन्थ साहिब , मारू सोलहे , महला –5,पृ. 1078
6, वही, भैरव , महला –5,पृ. 1142
7, वही, गउड़ी की वार, महला –4 ,, पृ. 302
8, श्री गुरूग्रन्थ साहिब , रागूसूही , महला –3,पृ. 753
9, वही,विलावलु,, महला –5 , पृ. 827
10, वही , गउडी पूरवी , महला –4 , पृ. 171
11, वही, षटुदरसन जोगी सन्यासी बिनु गुरू भरमी भुलाए ।। 5 ।।5 ।।22 ।। सिरि रागू , महला –3, पृ. 67
12, श्री गुरूग्रन्थ साहिब , रागू गउडी , महला –1, पृ.224–25
13, वही, ।।5 ।।11 ।।12 ।।माझू , महला –3 , पृ. 116
14, वही,।।3।।11 ।।4 ।सिरिरागू महला–3 पृ. , 30
15, वही , रागू गउडी , गूआरेरी , महला –3, पृ. 232
16, वही, मांझ की बार , महला ,–1, पृ. 140
17, वही , सूही, महला –1, पृ. 767
18, वही, गउडी सुखमनी , महला –5, पृ.286
19, वही, मलार , महला –5, पृ. 1264
20, वही , सलोक , महला –4, सलोक वारांते वधीक ,पृ. 1421

21, वही , गउड़ी सुखमनी , महला –5, पृ. 286
22, वही, धनासरी , महला –1,पृ.686
23, वही ,नट नाराइन, महला –4, पृ. 981
24, वही , माझ की वार , महला –1,पृ. 150
25, वही, रागु आसा , महला ,–4, पृ. 444
26, वही, नट नाराइन , महला ,–4, पृ. 1682
27, वही,सिरिरागू , महला –1, पृ. 58
28, वही, विलावलु, महला –4 ,पृ. 834
29, वही, गूजरी ,महला –1 ,पृ. 504
30, वही, सिरि रागू , महला –3 , पृ. 27
31, वही, वड.हंसु, महला –4 , पृ. , 561
32, वही, गउड़ी गुआरेरी , महला –5 , पृ.,239–40
33, वही, गूजरी की वार , महला –5, पृ. , 517
34, वही, गउड़ी , महला –5, पृ. 239
35, वही, सिरि रागू की वार , महला – 3, पृ. 91
36, वही , वड.हंस की वार, महला –3, पृ. 531
37, वही, माझ , महला–3 , पृ. 114
38, वही , गउड़ी , महला –1, पृ. 152
39, वही, वारमाफ की सलोकु,महला –1 ,पृ.140
40 , वही, धनासरी , महला –1, पृ. 662
41, गुरू शब्द ' रत्नाकर–महानकोष' , **भाई काहम सिंह**, पृ. , 2073
42, सिख इतिहास ,ठाकुरदेस राज , पृ.47
43, पंजाब का इतिहास , नारंग, पृ. 56344, सिख इतिहास , ठाकुर देसराज , पृ. 68
45, श्री गुरूग्रन्थसाहिब , जपुजी , पौडी –2, महला –1,पृ. 1

46, वही, गउड़ी , महला –1, पृ. 151
47, वही , मारू सोलहे , महला, –1 ,पृ., 1026
48, वही , गउड़ी , महला –1, पृ. 1511
49, वही , रामकली , महला –5 ,पृ. 886
50, वही, वड़हंसु की वार, महला–3 , पृ. 591
51, वही , गउड़ी , सुखमनी , महला–5 , पृ. 277–78
52, सुन्दर –दर्शन , त्रिलोकी नारायण दीक्षित , पृ. 216
53, कठोपनिषद अध्याय–1 ,वल्ली –3 , मन्त्र –3 ।
54, श्रीमद्भगतद्गीता , अध्याय–6, श्लोक–34
55, श्री गुरुग्रन्थ साहिब , आसा, महला –1 , असटपदिया ,पृ.415
56, वही, सिरि रागु , महला –1 पृ. 22
57, वही, वड़हंसु, महला ,–3 , पृ. 569
58, वही, गउड़ी , महला ,–5 , पृ. ,186
59, वही , गउड़ी , गुआरेरी , महला –5, पृ. , 18 0–81
60 , वही, सिरि रागु , महला– 3, पृ. 33
61, वही, सोरठि , महला –1 ,पृ. 634
62, वही , टोडी , महला–5 , पृ. 712
63, वही , रागु देव गान्धारी , महला –9, पृ. 536
64, वही, गउड़ी गुआरेरी , महला –5, पृ. 182
65, वही , महला –1 , पृ. 222
66, वही , आसा, महला –5 ,पृ. 394
67, वही, पृ. 392
68, वही , सिरि रागु , महला –1, पृ. 61
69, वही, गउड़ी , महला–5 , पृ. 297

70, वही , आसा की वार , महला –1 , पृ.,464
71, पंजाबी भाछा , विगियान अते गुरमति ज्ञान ,
72, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब , गउड़ी , वैरागिणि, महला–4 , पृ. 167
73, वही , धनासरी , महला –5 , पृ. 673
74, वही, प्रभाती , असटपदिया , मलार '–1 , विभास , पृ. 1342
75, वही , सिरि रागु , महला –3 , पृ.,30
76, वही, मलार , महला –3 , पृ. 1260
77, वही , आसा, महला –5 , पृ., 389
78, वही, सोरठि की वार , महला –3 , पृ. , 647
79, वही , बड़हंसु, महला – 3 , पृ. , 559
80, वही , रागु गउड़ी , असटपदिया , महला–1 , पृ. , 227
81, वही, मारू सोलहे , महला –1 , पृ. , 1035
82, वही ,गउड़ी सुखमनी , महला –5 , पृ., 278
83, वही, सूही , महला –1 काफी , पृ. 751
84, वही , सोरठि , महला –9 , पृ. 631
85 , वही , गउड़ी , महला –9 , पृ. , 220
86, वही, आसा , महला –5 पृ. , 378
87, वही , पृ. 374
88, वही , गउड़ी , महला –5 , पृ. 202
89, वही, नटनाराइन , महला–4 ,पृ. , 682
90, वही , सिरि रागु , महला –3 , पृ.33
91, वही , माझ, महला –3 पृ. , 112
92, वही , जपुजी , पौड़ी –19 , पृ. , 4
93, वही , महला –5,पृ. , 284
94, वही , गउड़ी पूरबी , महला –3 , पृ. 246

95, वही , थिति गउड़ी , महला –5 पृ. , 297
96, वही , मारू सोलहे , महला –1 ,पृ. 1030
97, वही , रामकली , महला –5 , पृ. 893
98, वही , सूही , महला –4, पृ. 734
99, वही , रागु गउड़ी , वैरागणि , महला –5 , पृ. 203
100, वही , वड़हंसु , महला – 3 , पृ. 570
101, वही , धनासरी , महला –3 , पृ. 666
102, वही , मारू , महला – 5 , पृ. 1018
103 , वही , रागु जजावंती , महला –5 , पृ. 1357
104, वही , रागु सूही , महला –4 , पृ. 773
105, वही , कानड़ा , महला –5 ,पृ , 1300
106, वही , सारंग , महला –5, पृ. ,1216
107, वही, सूही , महला –5 , पृ., 744
108, वही , गूजरी की वार , महला – 5,पृ. ,520
109, वही ,रागु गउड़ी पूरबी , महला –5 , पृ. 204
110, वही , गउड़ी , महला ,–5 , पृ. 189
111, वही , आसा की वार , महला –1, पृ. ,464
112, वही, मारू , महला –5 , पृ. ,998–99
113, वही , मारू सोलहे , महला –1 , पृ. , 1037
114, वही, सारंग , महला–5 , पृ. 1223
115, वही , गउड़ी , वैरागणि , महला –1 , पृ. , 228
116, वही , गूजरी , महला – 5 , पृ. 502
117, वही , सिरि रागु , महला – 5 , पृ. 70